मन का प्रकाश

डॉ० रामदास 'नादार'

एम० ए; पी-एच० डी०

कुमार प्रकाशन

नयी दिल्ली-110015

प्रकाशक : कुमार प्रकाशन
20/30, मोती नगर,
नई दिल्ली-110015

दूरभाष : 502289

संस्करण : प्रथम, 1988

मूल्य : आठ रुपये मात्र

मुद्रक : चोपड़ा प्रिंटर्स, मोहन पार्क,
नवीन शाहदरा, दिल्ली-32

MAN KA PRAKASH
By Dr. Ram Das 'Nadar' Price : 8.00

अपनी बात

बच्चों के लिए लिखी गई मेरी पुस्तकें 'आधुनिक भारत के राज्य', 'हिन्दोस्ताँ हमारा' तथा 'आओ, हम भी दीपक बनें' पसन्द की गईं, इससे प्रोत्साहित होकर मैंने अपने कुछ लेखों को पुस्तक रूप देने का निश्चय किया।

यह छोटी-सी पुस्तक मेरे उन्हीं सर्जनात्मक लेखों का संग्रह है। इन लेखों के विषय भिन्न-भिन्न हैं, भाषा भी सरल तथा सुबोध है। अतः इस पुस्तक की उपयोगिता नवसाक्षरों, बच्चों तथा वयस्कों सभी के लिए है। हर वय के व्यक्ति इससे समान रूप से लाभ उठा सकेंगे! वस्तुतः यह पुस्तक सभी वर्गों के पाठकों के लिए उपयोगी है।

ये सुरुचिपूर्ण लेख जहाँ पाठकों की जानकारी में अभिवृद्धि करेंगे, वहाँ उनके लिए मनोरंजन की सामग्री भी जुटाएँगे! साथ ही ये लेख शिक्षा-प्रद भी हैं। इनसे जानकारी, मनोरंजन तथा शिक्षा तीनों की प्राप्ति होगी!

इसी कारण यह पुस्तक सभी के लिए उपादेय है—बच्चों और वयस्कों दोनों के लिए। इसके पठन से सभी आनन्दित होंगे। एक विशेष लाभ यह होगा कि इससे उनका भाषा-ज्ञान भी बढ़ेगा।

मुझे पूर्ण आशा है कि इस पुस्तक का सभी स्वागत करेंगे।

—(डॉ०) रामदास 'नादार'

क्रम

मन का प्रकाश

दीवाली या दीपावली हमारा राष्ट्रीय पर्व है ! यह पर्व विजय दशमी के इक्कीस दिन बाद आता है। भगवान् राम चौदह वर्ष तक वनवास के कष्ट और दुःख भोगने के पश्चात् इसी दिन अयोध्या वापस लौटे थे ! उनके घर लौटने पर सभी अयोध्यावासी प्रसन्नता से झूम उठे थे ! उन्होंने दीपमाला करके अपने हृदय के मोद को अभिव्यक्त किया था ! इसके अतिरिक्त दीवाली का महत्त्व एक अन्य कारण से भी है ! दीवाली आने के साथ ही ऋतु में भी परिवर्तन आ जाता है। सारा वायुमण्डल बदलने लगता है ! गर्मी के स्थान पर मीठी-मीठी ठण्ड हो जाती है। वर्षा ऋतु के बाद विभिन्न प्रकार के रोग जन्म लेते हैं। कई तरह के कीटाणु पनपने लगते हैं। जगह-जगह गन्दगी के ढेर लग जाते हैं। वर्षा के कारण स्वच्छता तथा सफाई की हालत बिगड़ जाती है किन्तु दीपावली का आगमन वर्षा ऋतु के समाप्त होने का पता देता है। दीपावली जनसाधारण को यह अवसर देती है कि वे वातारण में व्याप्त अस्वच्छता को दूर करें। घरों की अन्दर बाहर से सफाई करें। चूना जैसे कीटनाशक से सफ़ेदी करके रोगों के कीटाणुओं का नाश करें। घरों में दीपमाला करके प्रकाश फैलाएँ। प्रत्येक वस्तु को उसके उचित स्थान पर सजाएँ और घरों की शोभा बढ़ाएँ ! उन्हें सुन्दर तथा आकर्षक बनाएँ।

हर वर्ष दीपावली आती है। हर वर्ष हम दीवाली मनाते हैं और घरों को साफ़ करते तथा चूने से पोतते हैं। दीपमाला करके प्रकाश का प्रबन्ध करते हैं मगर दीवाली मनाने का केवल यही एक मात्र ढंग तो नहीं है ! जिस घर में वास्तव में 'हम' निवास करते हैं अर्थात् मन रूपी घर जहाँ हमारी आत्मा रहती है—उसके अन्धकार को दूर करना और वहाँ ज्ञान का दीपक जलाना भी तो हमारा कर्त्तव्य है। मन रूपी इस घर की सफाई करना और उसकी मैल दूर करना भी तो हमारा दायित्व है। आओ ! हम

मन के अंधेरे को, मन की मैल को दूर करें ! तभी हम सच्चे अर्थों में दीवाली मना सकेंगे । जब तक हमारे मन में अज्ञान का अंधेरा विद्यमान है, तब तक हर वर्ष दीवाली मना कर भी हम दीवाली नहीं मनाते ।

आधुनिक मानव भौतिकता की ओर झुक रहा है । वह धर्म को छोड़कर धर्म का पाखण्ड रचने और स्वाँग करने की ओर प्रवृत्त हो रहा है । उसके मन में अज्ञान की घोर काली घटाएँ छाई हैं । उसके मन का कोना-कोना कालिमा से ओत-प्रोत है । मोह, लोभ, अहंकार, घृणा, विघटन और पाप ने उसे बुरी तरह घेर रखा है । दया, धर्म, मानवता, सौजन्य, मैत्री, शिष्टता उसके पास तक नहीं फटक पा रहे ! वह दिन-प्रतिदिन बुराइयों का आलिंगन कर रहा है ! विज्ञान की उन्नति उसे भौतिकता की ओर प्रवृत्त कर रही है ! उसके जीवन का लक्ष्य मात्र धन कमाना रह गया है । दूसरों को धोखा देना और छल कपट करना ही उसे प्रिय लगता है । इसी में वह अपनी योग्यता एवं क्षमता मानता है । भद्रता, शिष्टता, विनम्रता उसके लिए मूर्खता का पर्याय मात्र हैं ! जीवन-मूल्य बदल रहे हैं । कल तक जो बुराई समझी जाती थी आज वह सभ्य होने का चिह्न या प्रतीक मानी जाती है । नैतिकता के अर्थ भी बदल रहे हैं । इस कथित प्रगतिशीलता की दौड़ में कोई पीछे नहीं रहना चाहता ! पुराने जीवन-मूल्यों की बात करने वालों को मूर्ख तथा रूढ़िवादी की उपाधियों से विभूषित किया जाता है । सम्प्रदाय बढ़ रहे हैं, धर्म मिट रहा है ! सच तो यह है कि हमारे मन का अन्धकार और भी गहन और घना हो रहा है । मन की मैल बढ़ती जा रही है ।

ऐसी अवस्था में दीवाली हमको एक ही सन्देश देती है कि आओ, हम अपने मन का अंधेरा और मैल दूर करें । हमारे अन्दर जो पाप और बुराइयाँ घर चुकी हैं, उन्हें निकाल बाहर करें ! ज्ञान के दीप जलाएँ, मन का अंधेरा दूर करें । मन की सफाई तभी सम्भव है जब हम घृणा और वैमनस्य की मैल को अपने मन से धो डालें । मानवता, भाईचारा, दया, प्रेम, धर्म व नेकी के भाव ग्रहण कर जन-जन की सेवा का बीड़ा उठाएँ :

ख़ुदा के आशिक तो हैं हज़ारों वनों में फिरते हैं मारे-मारे,
मैं उसका बंदा बनूँगा जिसको ख़ुदा के बंदों से प्यार होगा ।

जब ज्ञान का दीपक मन में जल उठेगा और मन की मैल दूर हो जाएगी, तो इस घर का स्वामी वह ईश्वर एक नई सुषमा और दिव्य ज्योति के साथ हृदय के एक छोर से प्रकट हो जाएगा। जन्म-जन्मान्तर से हमने उसे बनवास दे रखा है! उसके घर लौटने पर हम सच्ची दीवाली मना सकेंगे और हर्षोल्लास से झूम सकेंगे! हमें एक ऐसे आनन्द की प्राप्ति होगी जिसकी तुलना में अन्य सभी आनन्द शून्य हैं। सभी खुशियाँ बेकार हैं, व्यर्थ हैं! दीवाली के पावन पर्व पर हम प्रतिज्ञा करें कि अपने मन की मैल दूर करेंगे! मन के अंधकार को चीरने वाले ज्ञान के दीपक प्रज्वलित करेंगे, तभी हमारी दीवाली एक अनुपम दीवाली होगी! ऐसी दीवाली ही हमारे जीवन का लक्ष्य है, हमारा ध्येय है।

हमें ऐसी दीवाली चाहिए जो दूर कर दे हमारे मन का अंधकार—हमारे मन का मैल! कर दे हमारे मन में प्रकाश।

□

त्याग का प्रतीक—दीपक

दीवाली हर साल आती है ! दीपों की पंक्ति दीवाली या दीपावली कहलाती है। चारों ओर दीपक जगमगा उठते हैं। सभी दिशाओं में प्रकाश छा जाता है। मेरे सामने एक-दो, दस-बीस नहीं बल्कि असंख्य दीपक जल रहे हैं ! इनमें कुछ बड़े हैं तो कुछ छोटे ! ये क्या करते हैं ? छोटे-बड़े का भेद मिटाकर सभी एक ही काम करते हैं—अंधकार का नाश करना, प्रकाश फैलाना ! वे स्वयं जलते हैं, अपना आप मिटाते हैं, त्याग करते हैं—तभी संसार को आलोकित कर पाते हैं।

जब कोई एक दीप जलता है तो आँधी का एक साधारण-सा झोंका भी उसे बुझा देता है। उसका अस्तित्व मिटा देता है। दीपक मिलकर और इकट्ठे जलें तो बड़े-बड़े झंझावात भी उनका कुछ नहीं बिगाड़ सकते। बड़ी-बड़ी आँधियाँ भी उनका अस्तित्व नहीं मिटा सकतीं ! झंझावात स्वयं हार जाते हैं किन्तु दीपों को नहीं हरा सकते। वे सीना तानकर उनका सामना करते हैं। अंधेरा दीपक का शत्रु है और प्रकाश उसका मित्र। शत्रु को मिटाना और भगाना दीपक का काम है। इसमें वह कोई कसर नहीं छोड़ता। पूरी शक्ति से जलता है, अकेला भी और मिलकर भी। शत्रु उसके सामने टिक नहीं सकता। जो हाथ उस पर पड़ता है उस हाथ को वह जला देता है। दीप से दीप जलता है। एक की लौ दूसरे को प्रज्वलित करती है। एक को देखकर दूसरे का उत्साह और साहस बढ़ता है।

दीपक जानता है कि उसका जीवन केवल एक रात का है, परन्तु वह इसकी चिन्ता किए बिना अपना कार्य किए जाता है। अन्तिम श्वास तक कर्म में जुटे रहना ही उसे प्रिय है। वह रोता नहीं, हँसता है। यह भाव कि उसका जीवन केवल प्रातः तक का ही है, उसके मन में निराशा को जन्म नहीं दे सकता। उसे कर्म करने से रोक नहीं सकता। कर्म ही उसका जीवन है। कर्म ही उसके जीवन का ध्येय है, भले ही वह जीवन कुछ क्षणों का हो

या कुछ घण्टों का ! उसके लिए एक दिन का उद्देश्यपूर्ण जीवन निरुद्देश्य शाश्वत जीवन से कहीं अधिक अच्छा है !

दीवाली के शुभ दिन दीपों की पंक्ति को ध्यान से देखें ! आओ ! हम भी दीपक बनें। दीपक के जीवन को अपने जीवन में उतार लें। उसके गुण अपने में समाविष्ट कर लें। अपनी बुराइयाँ निकाल बाहर करें।

दीपक अंधेरे का नाश करता है। गंदगी और घास-फूस को जलाता है। आओ, हम भी अपने मन के अंधेरे का नाश करें ! अपने हृदय के अज्ञान को मिटाएँ ! ज्ञान का प्रकाश फैलाएँ ! अपने हृदय से घृणा, शत्रुता, वैमनस्य, धोखा-धड़ी और अविश्वास को दूर भगाएँ। प्रेम, मैत्री, सौजन्य और भद्रता को उजागर करें। हमारे मन की मैल और अंधेरे मिट जाएँगे, स्वच्छता और पवित्रता की ज्योति जगमगा उठेगी। दीपक के विशेष गुण का हमारे भीतर समावेश हो जाएगा।

आज का मानव पतन के गर्त में जा गिरा है ! स्वार्थ और तुच्छ लाभ को उसने अपने जीवन का लक्ष्य मान लिया है। अपने क्षणिक और तनिक लाभ के लिए वह दूसरों की बड़ी से बड़ी हानि करने से भी नहीं चूकता। स्वयं जीना चाहता है, दूसरों को मारना चाहता है, मगर दीपक तो ऐसा नहीं करता ! स्वयं जलता है, अपना आप मिटा देता है पर दूसरों को प्रकाश देता है। दूसरों के मार्ग का अंधेरा दूर करता है। उनका मार्ग-दर्शन करता है। उनको गिरने से बचाता है। उनका भला करता है। अपने निज को उत्सर्ग करके भी दूसरों के जीवन की रक्षा करता है।

आज दीपक से मनुष्य को त्याग, बलिदान और परोपकार की शिक्षा लेनी है। त्याग का यह महान् सन्देश सुनना है। बलिदान का यह उत्तम पाठ पढ़ना है। तभी मनुष्य मनुष्य कहलाने का अधिकारी बन सकता है, अन्यथा नहीं।

दीपक का जीवन मात्र एक रात-भर का जीवन है। इतना छोटा जीवन और इतना बड़ा काम। मनुष्य के जीवन की सफलता दीर्घायु पाने में नहीं, अपितु अपनी आयु को उद्देश्यपूर्ण ढंग से बिताने में है, चाहे वह जीवन कुछ क्षणों, घण्टों, दिनों या वर्षों का ही क्यों न हो। सैंकड़ों, हजारों वर्ष जीना और कीड़ों-मकोड़ों की तरह मर जाना तो कोई जीना नहीं ! कुछ वर्ष जीना

मगर ऐसा जीना कि संसार उसे भूल न पाये, वास्तव में यही जीना है। स्वामी रामतीर्थ जी और स्वामी विवेकानन्द जी के शरीर कितना थोड़ा समय चले। पार्थिव शरीर मिट गए लेकिन उनकी महान् आत्माएँ नहीं मिट सकतीं। उनका नाम उनके काम से अमर हो गया है। वे कभी मर नहीं सकते, सदा अमर रहेंगे ! तो आओ, इस बात की चिन्ता किए बिना कि हमारा जीवन कितने वर्षों का है, अपना कार्य करते चलें और सदा अपना कर्त्तव्य निभाते चलें।

हमारा जीवन ऐसा हो कि दूसरे इससे कुछ पा सकें। लौ से लौ जलती रहे, अच्छाई से अच्छाई बढ़ती रहे। एक से दूसरे को प्रेरणा मिले। एक से दूसरे को उत्साह प्राप्त हो, साहस मिले। यह क्रम यों ही चलता रहे।

आज हमारा देश खतरे में है, इसकी आन खतरे में है, इसका मान खतरे में है। शत्रु ताक में बैठे हैं। अवसर खोज रहे हैं कि कब हमारी गर्दन दबोचें किन्तु यदि दीपकों की तरह हम मिलकर रहें तो जैसे बड़ी-से-बड़ी आंधी, भयंकर झंझावत दीपकों का कुछ नहीं बिगाड़ सकते, वैसे ही शक्तिशाली से शक्तिशाली शत्रु भी हमारा कुछ नहीं बिगाड़ सकेगा। वह मुंह की खाएगा, चारों खाने चित गिरेगा ! आवश्यकता है केवल मिलकर चलने की, मिलकर देश के लिए त्याग और बलिदान करने की। दीपक बनने की ताकि शत्रु को जला सकें ! स्वजनों के मार्ग का अंधेरा दूर कर सकें। संसार में न्याय और नेकी का ध्वज लहरा सकें ! इसलिए आओ, हम भी दीपक बनें। दीपक बनने की प्रतिज्ञा करें।

□

कमाओ पर मोह त्याग कर

दीवाली हमारा एक महत्त्वपूर्ण त्योहार है। अन्य कारणों के अतिरिक्त इस पर्व का महत्त्व इसलिए भी है कि इस दिन लोग धन की देवी लक्ष्मी का पूजन करते हैं और उसका आह्वान करते हैं। यहाँ तक कि कुछ लोग दीवाली की रात अपने भवनों के द्वार तक खुले रखते हैं, ताकि धन की देवी को उनके घर प्रवेश करने में कष्ट न हो! व्यापारी इस दिन अपने व्यापार का लेखा-जोखा करते हैं। पुराने बहीखाते बन्द करते और नये खातों का आरम्भ करते हैं क्योंकि दीवाली का दिन एक शुभ दिन है और लक्ष्मी-पूजन का दिन है। जो भी काम इस दिन आरम्भ किया जायेगा, उस पर लक्ष्मी देवी की कृपा होगी। यह है वह धारणा जो व्यापारी तो क्या सभी के मन में रहती है। इससे भी एक कदम आगे लोग यह कहते भी सुने जाते हैं कि जो लोग दीवाली के दिन जुआ नहीं खेलते, उनके यहाँ लक्ष्मी का प्रवेश नहीं होता और धन की देवी को जुआ खेलकर ही प्रसन्न किया जा सकता है, किन्तु इससे बढ़कर कोई बेतुकी और निराधार बात हो नहीं सकती। दीवाली के दिन प्रायः लोग दूसरों को पैसा देना भी अपशकुन मानते हैं परन्तु दूसरों से रुपया प्राप्त करना एक अच्छा शकुन समझते हैं। घरों पर रुपयों और नोटों की पूजा की जाती है। उन्हें दूध से नहलाया जाता है, जिसे बाद में चरणामृत समझकर पिया जाता है। मगर क्या इस प्रकार का लक्ष्मी-पूजन भारतीय संस्कृति के अनुकूल है? क्या भारतीय संस्कृति धन से इतना मोह करना सिखाती है, जितना आज हम इससे करने लगे हैं? आज तो वस्तुस्थिति यह है कि हमारा धर्म, ईमान सब कुछ पैसा ही बन गया है। देश-भक्ति, सम्बन्ध, मित्रता, मानवता सभी से रुपये को सर्वोपरि समझा जाता है। हमारे मन में रुपये को एक विशिष्ट स्थान प्राप्त हो गया है। हर उचित अनुचित ढंग से रुपया कमाना ही हमारे जीवन का प्रयोजन बन गया है। हम तीव्रता से आध्यात्मिक

मूल्यों का त्यागकर भौतिकता की ओर दौड़ रहे हैं ! रुपया बटोरने की लालसा पृत्येक व्यक्ति के मन में नृत्य कर रही है। लोभ, लालच, वैमनस्य और अनैतिकता ने हमारे समाज को घेर लिया है। त्याग, बलिदान और सहानुभूति के उच्च भाव तिरोहित हो रहे हैं। लोभ, लालच, काला व्यापार, घूस, अन्याय और अत्याचार का बोलबाला है। धूर्तता और धोखाधड़ी एक कला, बुद्धिमत्ता, कौशल एवं व्यावसायिक क्षमता के प्रतीक माने जाते हैं। जीवन की शान्ति और चैन जाता रहा है। सभी लोग अनुचित तरीकों से धन कमाकर अपने लिए आराम व सुख-सुविधा के साधन जुटाना चाहते हैं, चाहे इसके लिए दूसरों को कठिनाइयों एवं परेशानियों में ही क्यों न धकेलना पड़े। अपनी सुख-सुविधा के लिए दूसरों को कष्ट देना कोई पाप नहीं समझा जाता। मानवता नाम की चिड़िया उड़ गई है। आज का मानव मानव कम और दानव अधिक है। इन सभी बुराइयों के मूल में हमारी धन कमाने की लालसा और हमारा धन से प्यार ही है। जिसे हम जीवन का लक्ष्य समझने लगे हैं, वह तो एक निम्न साधन मात्र है, साध्य नहीं। रुपया हमें केवल इसलिए चाहिए ताकि पेट की अग्नि को शान्त कर सकें। जीवन बनाये रख सकें। अपनी दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति कर सकें। इससे अधिक हमें भला रुपये की क्या आवश्यकता है। महात्मा कबीर ने कहा है—

साईं इतना दीजिये, जामें कुटुम समाय।
मैं भी न भूखा रहूँ, साधु न भूखा जाय।।

बस हमें तो केवल इतना धन चाहिये जिससे अपना तथा अपने परिवार का पालन करने के अतिरिक्त द्वार पर आने वाले अतिथि या साधु की भी सेवा की जा सके। जो धन मात्र तिजोरियों की शोभा बढ़ाने के लिए या धन से मोह की भावना से अर्जित किया जायेगा वह धन पाप का जनक होगा ! इससे अनगिनत बुराइयों का ही जन्म होगा। वह धन हृदय को कलुषित करेगा। मानवता से दूर ले जायेगा। जो धन पवित्र साधनों से कमाया हुआ तथा उचित ढंग से अच्छे कार्यों में व्यय होगा, वही धन हमारे आध्यात्मिक उन्नयन का कारण बन सकेगा। हमें एक अच्छा

मानव बना सकेगा किन्तु इसका अर्थ यह कदापि नहीं कि हम परिश्रम और प्रयत्न करना छोड़ दें तथा संसार से विरक्त हो जायें। धन कमाना पाप नहीं, इसका संचयंन पाप है। इससे मोह करना पाप है। लक्ष्मी को बुलाना धर्म है किन्तु इसकी पूजा अर्थात् इसे जीवन का अन्तिम लक्ष्य समझना अधर्म है। धन कमाओ तो संचय के लिये नहीं, अपितु अच्छे कार्यों में व्यय करने के लिए कमाओ ! धन से हमारा मोह एवं आसक्ति अच्छी नहीं। इस पर सर्प बनकर बैठना और इसे छाती से लगाये रखना बुरा है। इसे साध्य नहीं साधन समझना चाहिये। भारतीय संस्कृति तो महाकवि रहीम के शब्दों में हमें तप और त्याग की शिक्षा देती है।

तरुवर फल नहिँ खात हैं, सरवर पियहिँ न पानि
कह रहीम पर काज हित, सम्पत्ति संचहिँ सुजानि !!

वृक्ष अपना फल आप नहीं खाते ! तालाब अपना पानी आप नहीं पीते। इसी प्रकार ज्ञानी लोग दूसरों के हित के लिए धन इकट्ठा करते हैं।

अगर हम इस भावना से धन इकट्ठा करते हैं तो बुरा नहीं लेकिन अगर अपने स्वार्थ को लेकर ही धन संचय की धुन दिन-रात हम पर सवार रहती है और इसके लिए हम उचित अनुचित, अच्छे बुरे का ध्यान भी नहीं रखते तो निश्चय ही हम अच्छे मनुष्य नहीं हैं। हमारा देश ऐक निर्धन है ! एक विकासशील देश है। हमें परिश्रम करके देश की दौलत बढ़ानी है। खेतों और कारखानों में कठोर परिश्रम कर दौलत के ढेर लगाने हैं किन्तु अपने लिए नहीं व्यक्तिगत लाभार्थ नहीं—सारे राष्ट्र के लिए हमें धनोपार्जन करना है ताकि हमारे सभी देशवासी समृद्ध हों। सभी को पेट-भर रोटी मिले ! सभी देशवासी सुखी एवं स्वस्थ हों। मनुष्य मात्र का भला हो, सबका कल्याण हो। इस भावना से लक्ष्मी का आह्वान करें तो ठीक है, उचित है !

□

दीपक और इन्सान

सूर्य डूबने जा रहा था। उसने कहा, "कौन मेरे बाद इस संसार को प्रकाश देगा।" चाँद था, सितारे थे—सब चुप रहे! छोटा-सा मिट्टी का दीपक—आगे बढ़कर बोला, "देवता, यह भारी बोझ मेरे दुर्बल कन्धों पर।"

ये कवि रवीन्द्रनाथ की एक कविता की पंक्तियाँ हैं। दीपावली का शुभ दिन दीपों का त्यौहार है। दीपों की असंख्य पंक्तियाँ उस दिन देखने को मिलती है! सैंकड़ों, हज़ारों दीपक अमावस की उस रात के घोर अन्धकार से जूझने के लिए जलते हैं! दीपक में तेल जलता है! इसकी बत्ती जल-जलकर समाप्त हो जाती है। ऐ भोले मानव! तू भी तो एक दीपक ही है! तेरी आयु की बत्ती भी तो जल रही है, समाप्त हो रही है! दीपक की भाँति तेरा जीवन भी तो आक्सीजन पर निर्भर है! जिस प्रकार दीपक को जलाने में सहायता प्राप्त होती है आक्सीजन से, उसी प्रकार तुझे भी श्वास लेने के लिए आक्सीजन की आवश्यकता है। सच तो यह है कि तू भी दिन-रात जल रहा है!

दीपावली के पावन पर्व पर आ ज़रा तू भी दीपक के समीप आ! इससे कुछ बातें कर! इसे समीप से निरख! इसको समझ, इससे कुछ सीख ले।

अमावस की रात है! चारों ओर अन्धकार का साम्राज्य है! सारे वातावरण को तिमिर की कालिमा ने घेर रखा है! हर तरफ अंधेरे के वृत्त पड़े हैं। दीपक जलता है—इसलिए कि इस अंधेरे के गहरे आवरण को फाड़ दे। इस कालिमा का नामोनिशान मिटा दे! मगर ऐ मानव, क्या तेरे चारों ओर अज्ञान, अशिक्षा का अन्धकार विद्यमान नहीं है? क्या स्वयं तेरे भीतर भी अन्धकार का साम्राज्य नहीं है? क्या तू ख़ुद अज्ञान के सागर में डुबकियाँ नहीं खा रहा है? तू भी इस दीपक के पद-चिह्नों पर

चल ! अपने भीतर, बाहर के अन्धकार को मिटा दे। अज्ञान, अशिक्षा के आवरण को फ़ाड़ दे ! ज्ञान का प्रकाश फैला दे।

दीपक जलता है—एक नहीं अनेक दीपक जलते हैं—अपने साथियों के साथ मिलकर ! ज़रा देख ! किस प्रकार चारों ओर प्रकाश फैला रहे हैं। तुझे आमन्त्रित कर रहे हैं कि तू भी एकता का पाठ पढ़। पग से पग मिला कर चलना सीख ! कंधे से कंधा जोड़। मिल के रह और मिल के बैठ। तभी तू अपना और दूसरों का भला कर सकता है।

दीपक जलता है—क्या अपने लिए ? नहीं ! दूसरों के लिए। स्वयं जल कर दूसरों को प्रकाश देना, लाभ पहुँचाना ही इसके जीवन का उद्देश्य है ! खुद कष्ट सहना और दूसरों के काम आना—यही इसका जीवन है, यही इसके जीवन का लक्ष्य है। आ ! तू भी इससे त्याग की यह भावना ले। अपने लिए नहीं, औरों के लिए जीना और औरों के लिए मरना सीख। परमार्थ में ही अपने जीवन का मूल्य समझ। यही तेरे कल्याण का मार्ग है। इसी में ही तुझे आनन्द की प्राप्ति होगी।

देख कितने दीपक जल रहे हैं। आँधी, झंझावात के सामने भी सीना ताने खड़े हैं ! मिट जाएँगे लेकिन जलते रहेंगे ! अपने कर्त्तव्य से विमुख नहीं होंगे। ये जीने की सौगन्ध खाये हुए हैं। आ ! थोड़ी-सी सहिष्णुता, दृढ़ता इनसे ग्रहण करें ! विपदाएँ, विपत्तियाँ तेरा बाल भी बाँका नहीं कर सकेंगी।

दीपक ! यह छोटा-सा दीपक अकिंचन दीपक। अट्टालिकाओं में, प्रासादों में नहीं जलता। यह तो निर्धन की झोंपड़ी को आलोकित करता है ! उसकी शोभा बढ़ाता है। बड़े-बड़े फ़ानूस तो धनवानों के ही काम आते हैं।

दीपक तो निर्धनों का मित्र है, साथी है, हमदर्द है; उनका दुःख बाँटने वाला है ! ऐ मानव ! तू भी निराश्रयों और बेबसों का मित्र, सखा बन, जिनका इस लोक में कोई नहीं। उनका साथ दे जो पीड़ित और निःसहाय हैं। तेरा जीवन तो उनके लिए है, जो धराशायी हैं ! उन्हें सहारा दे, उन्हें ऊपर उठा ! उनका सहायक बन !

एक कवि का कथन है—

नशा पिला के गिराना तो सबको आता है।
मज़ा तो जब है कि गिरतों को थाम ले साक़ी ।।

रोना तो दीपक को आता ही नहीं, सदैव हँसना ही इसकी प्रकृति है। यह दीपक जल रहा है—जान-बूझकर जल रहा है। यह जानते हुए भी जलता चला जा रहा है कि इसे केवल आज की रात जलना है। इसका जीवन मात्र एक दिन का है। फिर भी मुस्कराये जा रहा है! एक हँसी हँसे जा रहा है—खिल-खिल कर! ख़ुशी-ख़ुशी जीवन का प्रत्येक क्षण जिये जा रहा है। जब तक इसका जीवन है, तब तक भला क्यों उदास हो, क्यों मलिन मुख हो?

इसे आज की चिन्ता है, कल की नहीं। इसका हर श्वास दूसरों के काम आ रहा है! यह जानकर भी कि इसका जीवन कल तक का है, यह हाथ पर हाथ धरे चुप नहीं बैठ गया! अपना कर्त्तव्य, अपना दायित्व निभाये जा रहा है। यही जीवन का रहस्य है।

ऐ भोले मानव। तू भी हर रंग, हर परिस्थिति में जीना सीख! जीवन की शाम होने तक ख़ुशी-ख़ुशी जी, अपने धर्म का पालन कर! दीपक तुझे यही सिखाता है। तू मानव है, विवेक से काम ले। दूसरों से सीखने में कोई संकोच नहीं, कोई बुराई नहीं। दीपावली के शुभ दीपक के पास आ! इसके चरणों में बैठ! इसे समीप से देख। इससे जीवन का रहस्य जान!

लाडले चाचा नेहरू

14 नवम्बर एक पावन दिवस है। यह हमारे स्वर्गीय प्रधान मंत्री श्री जवाहरलाल नेहरू का जन्म दिन है। उन्होंने इस दिन की महत्ता इसे 'बच्चों का दिन' बना कर बढ़ा दी। उन्हें इसे अपने जन्म-दिवस के रूप में मनाना प्रिय नहीं था। अपने जन्म दिन को उन्होंने अपने राष्ट्र के बच्चों की भेंट कर दिया। परन्तु बचपन में उन्हें यह दिन बड़ा प्रिय लगता था, इसलिए नहीं कि यह उनका जन्म-दिवस था, बल्कि उन्हें तो सभी प्रकार के उत्सवों और त्यौहारों को उत्साह से मनाने का शौक था। इस बारे में उनका कहना है, 'मगर इन तमाम उत्सवों में मुझे अपनी सालगिरह के जलसे में ज्यादा दिलचस्पी रहती, जिसका ख़ास मुझसे ही सम्बन्ध था अर्थात् मेरी वर्ष-गाँठ का उत्सव। इस दिन मैं बड़े उत्साह और रंग व उल्लास में रहता था। सुबह होते ही एक बड़ी तराजू में गेहूँ और दूसरी चीज़ों के थैलों से तोला जाता और फिर वे चीज़ें गरीबों को बाँट दी जातीं और बाद में नये-नये कपड़ों से सजा-धजा कर मुझे भेंटें और उपहार दिए जाते। फिर शाम को दावत दी जाती। उस दिन का मानो मैं राजा होता। मगर मुझे इसका बड़ा दुःख होता कि वर्षगाँठ साल में एक बार ही क्यों आती है। मैंने इस बात का आन्दोलन-सा खड़ा करने की कोशिश की कि वर्षगाँठ के मौके वर्ष में एक बार ही क्यों, और अधिक बार क्यों न आया करें। उस समय मुझे क्या पता था कि एक ऐसा भी समय आएगा, जब ये वर्षगाँठ मुझको अपने बुढ़ापे के आने की दुःखदायी याद दिलाया करेगी।'

नेहरू जी जितने बूढ़े थे उतने बच्चे भी थे और युवक भी। जहाँ उनमें बूढ़ों जैसी प्रौढ़ता, बुद्धिमत्ता, अनुभवशीलता, धैर्य और सहिष्णुता थी, वहाँ बच्चों की-सी सरलता, प्रेम, सादगी और निष्कपटता भी थी। आयु भले ही उन्हें बुढ़ापे की याद दिलाती थी परन्तु वह युवकों से कहीं

अधिक युवक थे। उनमें पाई जाने वाली स्फूर्ति, कार्य-शक्ति और चुस्ती इसका प्रत्यक्ष प्रमाण थी।

आज वह भले चाचा नेहरू हों परन्तु कभी तो वे भी 'बालक नेहरू' थे। सभी बच्चों को उनके शुभ जन्म दिन पर यह जानने की उत्सुकता होगी कि जब वे बच्चा थे तो क्या वे उन जैसे ही थे, या किसी प्रकार उनसे भिन्न।

नेहरू जी की दो बहनें थीं परन्तु वे आयु में उनसे छोटी थी। ग्यारह वर्ष तक नेहरू जी अकेले ही रहे। चचेरे भाइयों के होते हुए भी बचपन में जवाहर अपने को एकाकी ही अनुभव करते थे। साथ में खेलने के लिए किसी भाई या बहन का अभाव उन्हें सदा खलता था! जब उन्हें पता लगा कि उनका कोई भाई अथवा बहन होने वाली है, तो उनकी प्रसन्नता की कोई सीमा न रही। वे 'आनन्द भवन' के बरामदे में बैठे बड़ी उत्सुकता से शुभ समाचार की प्रतीक्षा करने लगे।

थोड़ी देर के बाद डाक्टर कमरे से बाहर आये और हँसते हुए बोले, 'मिस्टर, तुम्हें प्रसन्न होना चाहिए कि तुम्हारी बहन हुई है, भाई नहीं जो तुम्हारी सम्पत्ति का हिस्सेदार बनता।'

नेहरू के हृदय को ठेस लगी। तुरन्त ही चिल्लाकर कहा,' मैं इतना कमीना नहीं हूँ 'डाक्टर साहब'। बालक का रोषपूर्ण उत्तर सुनकर डाक्टर साहब को अपने मज़ाक़ के अनौचित्य का अवश्य ही अनुभव हो गया होगा। अब बहन विजयलक्ष्मी के रूप में नेहरू जी को खेलने के लिए एक साथी मिल गया था।

इलाहाबाद के एक सुन्दर बाग़ में नेहरू जी के पूज्य पिता श्री मोतीलाल अपने साथियों के साथ टेनिस खेल रहे थे। एक अरबी नसल का सुन्दर-सा टट्टू भागता हुआ आया और लान में घुसता चला गया। थोड़ी देर हुई बालक नेहरू इस पर चढ़कर सैर को गये थे। टट्टू को खाली देखकर सभी में घबराहट फैल गई। सभी ने अपने रैंकिट फैंक दिये और बच्चे की खोज में दौड़ पड़े।

कुछ दूर जाकर उन्होंने देखा कि बालक जवाहर घर की ओर भागा चला आ रहा है। मोतीलाल जी ने दौड़कर उनको गोद में उठा लिया।

'शाबाश बहादुर' उन्होंने कहा, 'कहीं चोट तो नहीं लगी।'

'नहीं, पिता जी।' बालक ने उत्तर दिया—'टट्टू मुझे गिरा कर भाग गया, मैं दौड़कर उसे ही तो पकड़ने आ रहा था।' सभी बच्चे की इस मधुर बात पर हर्षित हो उठे।

जवाहर बाल्यावस्था में भी बड़े विनोदी और खेलकूद के प्रेमी थे। उनके भवन में एक तालाब था, जिसमें प्रायः मोतीलाल जी और उनके मित्र जलक्रीड़ा करने आते थे। एक बार सर तेज बहादुर सप्रू भी वहाँ आए, किन्तु उन्हें तैरना नहीं आता था। वे तालाब की पहली सीढ़ी पर ही बैठ गए। बहुत आग्रह करने पर भी वे नीचे नहीं उतरे। उनको पानी में ले जाने का प्रयत्न करने पर वे चीख पड़ते।

नटखट बालक जवाहर को मज़ाक़ सूझा। वह पानी में छिप कर चला गया और वहीं से ही उनकी टाँग खींच ली। वे छटपटाने लगे। यह देखकर सभी हँस पड़े।

जवाहर की आयु कोई पाँच-छः वर्ष होगी। एक दिन उन्होंने अपने पिता की मेज़ पर दो फ़ाउंटन पेन पड़े देखे। नन्हे समाजवादी जवाहर ने सोचा कि पिता जी को तो एक ही पेन की आवश्यकता होगी। यह सोचकर उन्होंने एक क़लम उठा लिया। जब पण्डित मोतीलाल जी अपनी मेज़ पर आए, तो उन्हें दूसरा क़लम न देखकर बहुत ही झुँझलाहट हुई। क़लम भी कीमती था। इसलिए खोज आरम्भ हुई। जवाहर ने डर के मारे क़लम का पता न दिया। बहुत सिरदर्दी के बाद अपराधी पकड़ा गया। फिर क्या हुआ, जवाहर लाल जी के अपने शब्दों में सुनिए—

'क़लम बरामद कर लिया गया। पिता जी बहुत नाराज़ हुए और मेरी ख़ूब मरम्मत की गई। दर्द से कराहता हुआ अपने अपमान पर दुखित मैं सीधा अपनी माँ के पास पहुँचा और कई दिनों तक अपने निर्बल और दर्द करते हुए शरीर पर मरहम-पट्टी करवाता रहा। मेरे दिल में पिता जी के लिए कोई दुर्भावना पैदा नहीं हुई। मैंने सिर्फ़ यह महसूस किया कि मुझे ज़रूरत से ज़्यादा सज़ा दी गई है। मगर फिर भी मेरा जुर्म ज़रूर था। इसके बाद भी पिता जी के लिए मेरे दिल में स्नेह-भाव पहले की

तरह ही दृढ़ रहा। पर अब ख़ौफ़ भी इसका एक अनिवार्य अंग बन गया था'।

पण्डित मोतीलाल जी बड़े उग्र स्वभाव के थे। उनके क्रोध का सामना करने का साहस किसी में न होता था। नेहरू जी जब छोटे थे, तो वे देखा करते थे कि प्रायः प्रतिदिन ही उनके पिता जी के अनेक मित्र उनसे मिलने आते थे और कई-कई घंटे बैठे बातें करते रहते थे। वे मन-ही-मन सोचा करते कि आखिर ये सब इतनी देर क्या बातें करते हैं। अतः वे परदे के पीछे खड़े हो जाते और अपने पिता जी तथा उनके मित्रों की बातें सुनते और कभी-कभी अन्दर की ओर झाँकते। कई बार ऐसा हुआ कि वे पकड़े गये और खींचकर बाहर लाए गये, परन्तु उनका डर तभी दूर हुआ जब मोतीलाल जी ने उन्हें प्यार से गोद में उठा लिया।

पण्डित मोतीलाल का ऐश्वर्य उन दिनों इलाहाबाद में अपनी मिसाल आप था। वह पाश्चात्य शिक्षा-दीक्षा के प्रेमी थे। उन्होंने बालक नेहरू की देख-रेख के लिए शिक्षक भी प्रायः अंग्रेज ही नियुक्त किये जो उन्हें घर पर ही पढ़ाते थे। वे भारत के किसी स्कूल में नहीं पढ़े। 10-11 वर्ष की आयु में ही उन्होंने अंग्रेज़ी की अच्छी योग्यता प्राप्त कर ली। वे स्काट डिकेन्स और थेकरे के उपन्यास भी बड़ी सरलता से पढ़ने लगे थे। उन्हें एक अध्यापक पढ़ाते थे। जिनका नाम था एफ० टी० ब्रुक्स। वे बड़े सादे व्यक्ति थे। उन्होंने पाश्चात्य विचारधारा में डूबे नेहरू परिवार के बालक जवाहर को भारतीयता के रंग में रंगने का प्रयत्न किया। एक बार मोतीलाल नेहरू और उनके मित्र भोजन कर रहे थे। भोजन की वस्तुओं में मद्य और मांस सभी कुछ था। सभी बिना हिचकिचाहट उनका प्रयोग कर रहे थे, परन्तु बालक नेहरू एक कोने में चुपके खड़ा था और इन वस्तुओं को छू तक न रहा था। मोतीलाल जी ने आश्चर्य से नेहरू की ओर देखा परन्तु नेहरू यह कहते हुए वहाँ से चले गए, 'मुझे मेरे अध्यापक ने इन वस्तुओं का उपयोग न करने को कहा है। मैं तो ये नहीं खाऊँगा'। इस प्रकार एक दिन सभी सिनेमा जाने की तैयारी कर रहे थे लेकिन बालक जवाहर ने वहाँ जाने से इन्कार कर दिया, जिस कारण सारे परिवार को कार्यक्रम स्थागित करना पड़ा।

इन अध्यापक महोदय की शिक्षाओं का यह परिणाम निकला कि नेहरू धर्म की ओर आकर्षित हुए। परन्तु जल्दी ही मिस्टर ब्रुक्स को अपने पद से पृथक् कर दिया गया और नेहरू जी इस ओर अधिक न बढ़ सके।

जवाहर कुछ बड़े हुए तो उनके हृदय में राष्ट्रीय भावनाएँ जागृत होने लगीं। पं० मोतीलाल जी के एक मुन्शी मुबारकअली उन्हें 1857 के विद्रोह की घटनाएँ सुनाया करते थे। धीरे-धीरे जवाहर के हृदय में स्वदेश-प्रेम की हिलोरें उठने लगीं। वे 12-13 वर्ष की उस नन्ही-सी अवस्था में ही एशिया को यूरोप के पंजे से मुक्त कराने के स्वप्न लेने लगे। 15 वर्ष की आयु में जवाहर पढ़ने के लिए इंग्लैण्ड के हीरो स्कूल में गए और वहाँ की पढ़ाई समाप्त कर वहीं कैम्ब्रिज विश्वविद्यायल में पढ़ने लगे। इसके बाद स्वतंत्रता-संग्राम में जो कुछ उन्होंने किया और जो कष्ट सहे, आज वे किसी से छिपे नहीं हैं। वे स्वतंत्र भारत के पहले प्रधान मंत्री बने। उन्हें सदा यह चिन्ता रहती थी कि हमारा देश सुखी हो, हमारे देश के बच्चों का भली प्रकार लालन-पालन हो, उन्हें अच्छी शिक्षा मिले। बच्चे ही देश के भावी नेता हैं, अतः उनसे उन्हें विशेष प्यार था। वे विशेष प्रसन्न और सुखपूर्ण मुद्रा में छोटे बच्चों के बीच ही दिखाई पड़ते थे। वे कितने ही महत्वपूर्ण कार्य में व्यस्त क्यों न हों, यदि घर में एक दो बच्चे भी होते, तो उनके साथ खेलने के लिए कुछ-न-कुछ समय निकाल ही लेते ! उनके साथ वे स्वयं बच्चे बन जाते। इससे उनका दिलबहलावा हो जाता और वे थोड़ी देर के लिए अपनी सब चिन्ताएँ, परेशानियाँ और उत्तरदायित्व भूल जाते। बच्चे भी उन्हें बहुत चाहते थे, वे उन्हें 'चाचा नेहरू' के नाम से जानते और पुकारते थे !

बाल-दिवस और बच्चे

नेहरूजी को बच्चों से अगाध स्नेह था। नेहरूजी ने देश की स्वतंत्रता चाही तो इसलिए कि भारत के बच्चे और सन्तति एक अच्छा जीवन जी सके। जब कभी उन्हें चीथड़ों में ढके सुंदर बच्चे दिखाई देते, तो उनका संवेदनशील हृदय चीत्कार कर उठता। वे चाहते थे कि बच्चों को अच्छा खाना-पीना मिले, अच्छी शिक्षा प्राप्त हो। वे स्वस्थ हों तथा उन्हें जीवन में वे सब साधन उपलब्ध हों, जो अन्य विकसित तथा स्वतंत्र देशों के बच्चों को प्राप्त हैं। उन्होंने कई बार राष्ट्र का ध्यान इस ओर आकर्षित किया। उन्हें बच्चों से इतना प्यार था कि जब भी वे किसी भोले-भाले शिशु को देखते, उसे अपनी गोद में उठा लेते। उसके गले में फूलों का हार डाल देते। उसे पुचकारते और प्यार करते। किसी बच्चे के साथ हुए दुर्व्यवहार को देखकर वे आग बबूला हो उठते थे। जहाँ राष्ट्र को उन्होंने अपना बहुमूल्य जीवन दान दिया, वहाँ उन्होंने बच्चों को इससे भी अधिक मूल्यवान् वस्तु अपना जन्म-दिन दे दिया। उन्हें अपना जन्म-दिन बहुत प्रिय लगता था। अपना यह मूल्यवान् जन्म-दिवस उन्होंने देश के बच्चों को अर्पित कर दिया। वे नहीं चाहते थे कि उनका जन्म-दिन नेहरू के जन्म-दिन के रूप में मनाया जाए, बल्कि इस दिन को "बाल दिवस" या बच्चों के दिन के रूप में मनाए जाने की परम्परा उन्होंने अपने जीवन में ही डाल दी थी।

चौदह नवम्बर का महत्त्व आज बाल-दिवस के रूप में है। इस दिन माता-पिता, सरकार तथा समस्त राष्ट्र को यह स्मरण कराया जाता है कि बच्चों की अच्छी देखभाल हो ताकि वे श्रेष्ठ मानव बनकर भारत माता के वैसे ही सपूत बन सकें जैसे स्वयं नेहरू जी थे। आज के बच्चे ही कल के नेता हैं। बच्चों से भावी राष्ट्र जन्म लेता है। आज के बच्चे ही देश का भविष्य हैं। अगर आज बच्चों का लालन-पालन सुचारु रूप से होगा तो एक महान् तथा स्वस्थ राष्ट्र का निर्माण हो सकेगा। जहाँ "बाल दिवस"

राष्ट्र को अपने बच्चों के प्रति कर्त्तव्य की याद दिलाता है, वहाँ यह इस बात पर भी बल देता है कि देश के जीवित रहने पर ही बच्चों का भविष्य उज्जवल बन सकता है, अन्यथा उनका भविष्य भी अन्धकारमय हो जायेगा । देश की स्वतन्त्रता ही उनके सुन्दर भविष्य को सुनिश्चित कर सकती है । देश के बच्चों को भीं इस बात को समझना चाहिए । यदि उन्हें स्वतन्त्र वातावरण में साँस लेना है, और अपने भाग्य के स्वामी स्वयं बनना है, तो देश की स्वतन्त्रता को बनाये रखना भी उनका परम पावन कर्त्तव्य है । देश की स्वतन्त्रता में उनका शानदार तथा सुखद संसार निहित है । देश की स्वतन्त्रता पर यदि आँच आती है तो उनके भविष्य को भी धूमिल कर देगी । बच्चे भली-भाँति जानते हैं कि देश को बाहर तथा अंदर से सदा ही ख़तरों का सामना रहता है । जिन देशों को हमारी प्रगति एक आँख नहीं भाती, वे हमारे लिए कठिनाइयाँ पैदा करने से नहीं चूकते । इधर कुछ अनजान और नासमझ लोग देश के भीतर भी फूट, घृणा और अव्यवस्था का प्रचार करते रहते हैं । ये बातें किसी के हित में नहीं । इससे देश कमजोर होता है । देश के बच्चे प्रेम, स्नेह एवं सौहार्द के प्रतीक हैं । उन्हें इन गुणों का प्रचार प्रसार करना चाहिये । प्रसन्नता की बात यह है कि बच्चों ने इस यथार्थ से अपनी आँखें नहीं मूँद रखीं । वे अपने कर्त्तव्य को भली प्रकार जानते और समझते हैं । उनमें अपेक्षित उत्साह और लगन मौजूद है । जापान के बच्चों के विषय में कहा जाता है कि वे बड़े देश प्रेमी हैं और अपने देश के लिए बड़े से बड़ा त्याग करने को सदा तत्पर रहते हैं । दूसरे महायुद्ध में ऐसे बच्चों की कहानियाँ सुनने में आई हैं, जिन्होंने अपनी छाती पर बम बाँधकर शत्रुओं के यानों को नष्ट किया और अपने प्राणों की आहुति दे दी । यह सब उन्होंने इसलिए किया कि उनके भाइयों का भविष्य सुरक्षित हो सके । उनके देश की स्वतन्त्रता बनी रह सके ।

हमारे देश के बच्चे भी जापान या किसी अन्य राष्ट्र के बच्चों से कम देश भक्त या राष्ट्र-प्रेमी नहीं हैं । इसका प्रमाण देश पर होने वाले आक्रमणों से मिल चुका है । बच्चों ने अपना जेब-खर्च बचाकर लाखों रुपये रक्षा-कोष के लिए एकत्र किये । युद्ध के दिनों में सभी राज्यों के बच्चों में

अदम्य उत्साह तथा जोश पाया जाता था। बम्बई के एक नौ वर्षीय बालक ने वायु सेनाध्यक्ष से प्रार्थना की थी कि उसे वायु सेना में प्रवेश दिया जाये ताकि वह शत्रुओं के वायुयान नष्ट कर सके। उसने उन्हें लिखा था कि उसके पास एक बंदूक भी है। कश्मीर के दो बच्चों ने गोलियों की बौछार में अपने सैनिकों को पानी लाकर पिलाया और अपने जीवन की भी परवाह नहीं की। आज भी हमारे देश के बच्चे वीर अभिमन्यु से किसी प्रकार कम नहीं। बालिकाएँ भी जवानों की सेवा के कार्य करती रही हैं। उनके लिए उन्होंने अल्पाहारगृह चलाये हैं, स्वेटर बुने हैं। नागरिक सुरक्षा के कार्यों में हाथ बटाया है। आग बुझाने, प्राथमिक चिकित्सा तथा संदेश पहुँचाने आदि का प्रशिक्षण प्राप्त किया है। एन० सी० सी० में प्रवेश प्राप्त कर बंदूक चलाना तथा दूसरे जोखिम के काम करना सीखा है। ये सब बातें देश के जीवन में नई स्फूर्ति को परिलक्षित करती हैं। जिस देश के बच्चे अपने कर्त्तव्य के प्रति जागरूक हैं, उसे कोई अपना दास नहीं बना सकता!

एक अन्य कार्यक्षेत्र जिसमें बच्चे सहायक हो सकते हैं, वह है देश में उत्पादन बढ़ाना। हमारा देश कृषि प्रधान देश है। इसकी 80 प्रतिशत जनसंख्या ग्रामों में रहती है और खेती करती है। बच्चों को अपने किसान माता-पिता का कृषि-कार्यों में हाथ बटाना चाहिए किन्तु यह काम उन्हें अपने फ़ालतू समय में ही करना चाहिए, न कि अपनी शिक्षा के प्रति उदासीन होकर। इससे देश में खाद्यान्नों की पैदावार बढ़ेगी और सबको पेट भर भोजन मिल सकेगा। एक और बात भी ध्यान देने योग्य है कि किसी को भी अपनी आवश्यकता से अधिक अन्न का भण्डारण नहीं करना चाहिए। आवश्यकता से अधिक खाना भी पाप है और अनाज का एक दाना नष्ट करना भी पाप से किसी प्रकार कम नहीं।

□

नेहरू जी की कुछ यादें

नाकामयाब वकील

पण्डित जवाहरलाल नेहरू को वकालत बिल्कुल प्रिय नहीं थी ! डॉ० कैलाशनाथ काटजू ने उनके वकालत के दिनों की एक घटना का वर्णन करते हुए लिखा है—'एक दिन पण्डित मोती लाल जी के पास एक बुढ़िया आई ! वह अपनी ज़मीन के किसी झगड़े के विषय में पण्डित मोतीलाल को अपना वकील करना चाहती थी। यह झगड़ा बिल्कुल साधारण प्रकार का था और इसमें बुढ़िया का पक्ष प्रबल था। झगड़े का निर्णय बुढ़िया के पक्ष में हो जाना निश्चित था। पण्डित मोतीलाल जी ने बुढ़िया की ओर से वकालत करना स्वीकार कर लिया और बुढ़िया ने उनकी भारी फ़ीस अदा कर दी। मोतीलाल जी ने यह समझ कर कि अभियोग बिल्कुल साधारण प्रकार का है, अपने स्थान पर वकालत करने के लिए नेहरू जी को भेज दिया। बुढ़िया के विरोधी पक्ष का वकील मैं (डा० काटजू) था। न्यायालय में मैंने वे ज़ोरदार दलीलें दीं कि जवाहरलाल से उनका कोई उत्तर न बन पड़ा। उनके मुंह से झाग निकलने लगी। परिणाम यह हुआ कि निर्णय बुढ़िया के विरुद्ध हुआ। बुढ़िया को जब अपनी हार का पता चला तो वह रोती-पीटती पण्डित मोती लाल के पास गई। मोतीलाल जी ने उसे ढाढ़स बँधाई और उच्च न्यायालय में अपील करके और स्वयं बुढ़िया की ओर से पेश होकर निर्णय बुढ़िया के पक्ष में करवा दिया। वही असफल वकील भारत का सफल प्रधानमन्त्री बना।

बहादुर नेता

जवाहरलाल जी कितने निडर और साहसी थे यह भी सुनिए ! 1942 के भारत छोड़ो आन्दोलन की बात है ! प्रातः चार बजे बम्बई में देश के

सभी नेताओं को पकड़ लिया गया। उन्हें एक गाड़ी में बिठाकर अहमद नगर दुर्ग में ले जाया जा रहा था। अहमद नगर के स्टेशन पर जब यह गाड़ी आकर रुकी तो अपने नेताओं का स्वागत करने वाले लोगों की भीड़ सागर की तरह उमड़ रही थी। भीड़ नारे लगाने लगी—'इंक़िलाब ज़िन्दाबाद' 'अंग्रेज़ो, हिन्दुस्तान छोड़ जाओ'। अंग्रेज़ों की साम्रजी पुलिस यह सहन न कर सकी। उसने लोगों पर लाठी चार्ज आरम्भ कर दिया। जवाहरलाल जी अपने डिब्बे में बैठ यह सब देख रहे थे। उनसे न रहा गया। वे डिब्बे के द्वार की ओर लपके किन्तु द्वार पुलिस के एक अधिकारी ने बन्द कर रखा था। और कोई रास्ता न देखकर उन्होंने खिड़की से बाहर छलांग लगा दी और देखते ही देखते वे भीड़ तक पहुँच गए। क्रोध में तमतमाए जवाहरलाल ने दो एक सिपाहियों को घूंसे लगा दिए और आंखों से आग बरसाते हुए कहा, 'बन्द करो यह लाठी चार्ज'। (Hell with this lathi charge !) यह कहकर उन्होंने पुलिस को एक ओर धकेल दिया और लोगों को दूसरी ओर कर दिया।

क्रोधी प्रियजन

जवाहरलाल में केवल निडरता और निर्भयता ही कूट-कूट कर न भरी थी बल्कि उन्हें कायरता से भी बड़ी घृणा थी। कुरुक्षेत्र में पाकिस्तान से आए विस्थापितों का एक बहुत बड़ा शिविर था।

एक बात जवाहर लाल जी वहां गए। कुछ बेघर लोगों ने उनके सामने अपनी कुछ शिकायतें रखनी चाहीं। वे उनकी कार के आगे लेट गये! पण्डित जी ने अपनी कार रोक ली और नीचे उतर कर लेटे हुए लोगों में से एक को दो थप्पड़ दे मारे! बाद में एक सभा में भाषण करते हुए उन्होंने इस घटना का उल्लेख किया और कहा, 'आज जब मैं यहां आया तो कुछ लोग मेरी कार के आगे लेट गए, मुझे यह बिल्कुल पसन्द नहीं। इस प्रकार कार के आगे लेटना हद दर्जे की कायरता है, भीरुता है। अगर कोई शिकायत है तो मेरे पास आइए, मैं आपकी बात सुनूंगा, पर इस तरह की कायरता मैं कभी सहन नहीं कर सकता"।

जब उन्होंने ये शब्द कहे तो श्रोताओं की भीड़ में से एक आवाज़

आई, 'पण्डित जी, अब उन्हें क्षमा कर दीजिए'।

इस पर पण्डित जी हँसते हुए बोले 'क्षमा करने का तो प्रश्न ही नहीं। उन्होंने अपना काम किया और मैंने अपना काम किया।' उनका संकेत थप्पड़ मारने की ओर था। इस पर उपस्थित श्रोता भी खिल-खिला कर हँस पड़े।

कर्म-योगी

नेहरू जी जहां बात के धनी थे, वहां वे कर्मयोगी भी थे। उनकी दृष्टि में उन्हीं लोगों का सम्मान था जो कर्त्तव्य को ही पवित्र समझते हैं और उसे प्राथमिकता देते हैं।

एक बार वे चित्तौड़गढ़ गए। उनकी कार को रेल की लाइन पार कर आगे जाना था, मगर चूंकि रेलगाड़ी आ रही थी इसलिए गैंगमैन ने फाटक बन्द कर दिया था। पण्डित जी की कार कुछ देर तक वहीं रुकी रही। पुलिस के कुछ अधिकारियों ने गैंगमैन को धमका कर फाटक खुलवाना चाहा परन्तु उसने किसी की बात न मानी। पण्डित जी कार से उतर कर पैदल चल पड़े। जब वह फाटक की ओर बढ़े तो गैंगमैन भयभीत होकर अपने स्थान से खिसकने लगा। पण्डित जी ने उसे अपने पास बुला लिया और उसकी पीठ थपथपाते हुए बोले, "तुमने फाटक न खोल कर अच्छा किया है और अपने कर्त्तव्य का पालन किया है। मुझे तुम जैसे कर्त्तव्य-परायण कर्मचारियों की ही आवश्यकता है।"

नासिक में कांग्रेस सम्मेलन हो रहा था। सारे पंडाल में इधर-उधर केले के छिलके बिखरे पड़े थे। कांग्रेस के बड़े-बड़े नेता वहीं बैठे थे। किसी का ध्यान उन छिलकों की ओर नहीं गया, मगर नेहरू जी की दृष्टि से भला वे कब बच सकते थे! जब उन्होंने देखा कि उन छिलकों को उठाने वाला कोई नहीं तो झट अपनी जगह से उठकर छिलके इकट्ठे करने लगे और उठा-उठा कर उन्हें एक टोकरी में डालने लगे। इस पर उपस्थित सभी लोग लज्जित हुए और तब सभी ने छिलके उठाने और पण्डाल को साफ करने में नेहरू जी का साथ दिया।

पागलों से भेंट

एक बार नेहरू जी आगरा गए। वहां वे मानसिक रोगियों का हस्पताल देखने पहुँचे। जब वे हस्पताल का निरीक्षण कर रहे थे, तो हस्पताल के अधीक्षक ने उन्हें कुछ ऐसे रोगियों से मिलाया जो अभी पूरी तरह से स्वस्थ नहीं हुए थे !

अधीक्षक ने रोगियों से नेहरू जी का परिचय कराते हुए कहा, "आप भारत के प्रधानमंत्री हैं।" यह सुनकर उनमें से एक रोगी नेहरू जी से यों सम्बोधित हुआ—"कोई बात नहीं, घबराइए नहीं, आप ठीक जगह पहुँच गए हैं। अब आप बिल्कुल ठीक हो जाएंगे। मैं भी जब यहां आया था तो अपने आप को भारत का प्रधान मंत्री ही कहता था। चिन्ता न कीजिए, मैं भी ठीक हो गया हूँ, आप भी ठीक हो जाएंगे।"

उसकी बात सुनकर नेहरू जी खिल-खिलाकर हँस पड़े और उनकी हँसी में सभी ने साथ दिया।

□

अंधेपन से कैसे बचें

भारत के गांवों में 50 प्रतिशत बच्चे जन्म लेने के पहले मास में ही मृत्यु का शिकार हो जाते हैं। सैकड़ों बच्चे ऐसे हैं जो छः वर्ष की आयु तक नहीं पहुँच पाते। संसार के कुछ अधिक पिछड़े देशों को छोड़ कर भारत ही एक ऐसा देश है, जहाँ बच्चों की मृत्यु संख्या इस क़दर अधिक है। इसका कारण ग़रीबी, अशिक्षा, भूख और इलाज की सुविधाओं का अभाव है। जो बच्चे जीवित रहते हैं, वे कुपोषण के परिणामस्वरूप अनेक रोगों से पीड़ित रहते हैं। यही कारण है कि ऐसे बच्चों का क़द और भार उचित स्तर से कम रहता है।

यह स्थिति केवल गाँवों में ही नहीं नगरों में भी है। भारत में छः वर्ष से कम आयु के बच्चों की कुल संख्या 12 करोड़ है। चिकित्सकों के मत में नवजात शिशुओं की मृत्यु दर में अधिकता का एक कारण यह भी है कि बच्चे की माता को पौष्टिक भोजन प्राप्त न होने के कारण बच्चे को अपनी माँ से पूरी पौष्टिकता प्राप्त नहीं हो पाती और वे कुपोषण के शिकार हो जाते हैं। दूसरा कारण जन्म के समय स्वास्थ्य सुविधाओं की कमी है जिसके फलस्वरूप कई बार शिशुओं को आन्तरिक चोटें भी लग जाती हैं और वे पैदा होते ही बिना किसी प्रत्यक्ष कारण के मृत्यु का ग्रास बन जाते हैं। साथ ही संक्रामक रोगों से उनकी रक्षा का भी कोई प्रबन्ध न होने से वे कई रोगों का शिकार होकर मृत्यु के मुँह में चले जाते हैं। कुछ ऐसे भी रोग हैं जिनकी नींव बचपन में ही पड़ जाती है और बच्चा आजीवन इनसे पीड़ित रहता है। इन रोगों में से एक अंधापन भी है।

बच्चों में अधिकतर आँखों के रोग कुपोषण और विशेषकर विटामिन 'ए' की कमी से होते हैं। भारत में लाखों बच्चे विटामिन 'ए' की कमी के कारण अन्धे हो जाते हैं और कष्टमय जीवन व्यतीत करते हैं। भोजन में

विटामिन 'ए' न मिलने से ही प्रायः ऐसा होता है। ग्रामवासी अपनी अज्ञानता तथा अशिक्षा के कारण अपने उपलब्ध साधनों का प्रयोग नहीं कर पाते। देश में लगभग 90 लाख व्यक्ति अंधे हैं। जिनमें से 10 लाख ऐसे हैं जो केवल विटामिन 'ए' की कमी के कारण अंधे हैं। हमारे गाँवों के लोगों में ग़रीबी हो सकती है लेकिन हमारे भोजन में गरीबी नहीं है। वह हर प्रकार से अमीर है। इस भोजन में वे सब पोषक तत्त्व विद्यमान हैं जो किसी भी अमीर से अमीर देश के भोजन में हो सकते हैं। अपने भोजन का पूर्ण ज्ञान तथा उसका सन्तुलन करना ही हमें विटामिन 'ए' की कमी से बचा सकता है और बच्चों एवं बड़ों को अंधा होने से रक्षा कर सकता है।

विटामिन 'ए' हरे पत्ते वाली सब्ज़ियों से मिल सकता है। दूध, गाजर, सीताफल तथा अंडों से भी विटामिन 'ए' मिलता है। इसलिए ग्रामीणों को यह शिक्षा दी जानी चाहिए कि बच्चों को शुरू से ही ये पदार्थ दें, जिससे उनकी आँखों की रक्षा हो सके।

अंधापन रोकने के और भी तरीके हैं। सरकार ने पाँच वर्ष की आयु के सभी बच्चों को विटामिन 'ए' की ख़ुराकें देने का स्तुत्य निश्चय किया है। एक वर्ष में 40 लाख बच्चों को स्वास्थ्य-केन्द्रों के माध्यम से ये खुराकें दी जायेंगी। लेकिन जैसा कि ऊपर बताया जा चुका है कि इस आयु वर्ग के 21 करोड़ बच्चे हैं। इसलिये समस्या काफी जटिल है।

हाँ, इस योजना का एक उज्जवल पहलू भी है। यदि एक बच्चे को साल में एक या दो बार भी विटामिन 'ए' का घोल पिला दिया जाये तो उसे अंधापन नहीं सता सकता। विटामिन 'ए' का गुण यह है कि वह एक लम्बे समय तक शरीर में जमा रहता है। इसी कारण आवश्यकता से अधिक या बिना आवश्यकता विटामिन 'ए' लेना हानिकारक भी हो सकता है! यों कोई भी दवाई डाक्टर के परामर्श से ही लेनी चाहिए।

कई बच्चों को और बड़ों को रात को दिखाई नहीं देता। इसका कारण भी विटामिन 'ए' की कमी है कभी-कभी शरीर पर सफ़ेद चकत्ते और आँखों में धब्बे बन आते हैं। ये धब्बे इलाज के बाद भी दूर नहीं होते। अपर्याप्त भोजन भी बहुत बड़ा अभिशाप है। होता क्या है कि

कुपोषण से बच्चे तथा माता दोनों के ख़ून पर बुरा असर होता है। ख़ून की कमी हो जाती है और तपेदिक घर कर लेता है। गर्भवती माताओं को जब विटामिन 'ए' वाला भोजन नहीं मिलता तब उनकी संतान में भी विटामिन 'ए' की कमी हो जाती है !

राष्ट्रीय पोषण संस्थान भारतीय भोजन के सम्बन्ध में अनुसंधान करने का सराहनीय कार्य कर रहा है। कुछ उपयोगी अनुसंधान करने के बाद उसने एक पुस्तक भी प्रकाशित की है जिसमें देश के विभिन्न क्षेत्रों में खाये जाने वाले भोजन तथा पोषण पर मानचित्र दिये गये हैं।

इनके अध्ययन से मालूम होता है कि सस्ती चीज़ों में भी पर्याप्त पोषक तत्त्व विद्यमान होते हैं। अमरूद में सेब से ज्यादा पोषक तत्त्व होते हैं और मूंगफली में बादाम से भी अधिक। यदि कोई व्यक्ति भोजन ख़ूब लेता है और उसमें पोषक तत्त्व नहीं हैं तो वह भी स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है। संस्थान के राष्ट्रीय पोषण मानीटरिंग ब्यूरो ने सर्वे के बाद मालूम किया है कि कर्नाटक में चावल, दाल तथा अनाज की प्रति व्यक्ति सबसे अधिक खपत है। इसके बाद आंध्र प्रदेश, पं० बंगाल, महाराष्ट्र, गुजरात व केरल आते हैं। यह ब्यूरो सारे देश का पोषण स्तर बनाने का इरादा रखता है ताकि यदि कोई कमी हो तो उसे उचित निर्देश देकर सुधारा जा सके।

भोजन पकाने, रखने तथा खाने के तरीक़ों में उचित संशोधन करके भी विटामिनों की क्षति पूर्ति की जा सकती है। हमारे खाने और पकाने के तरीके कुछ ऐसे हैं जो हमारे भोजन को अमीर होते हुए भी ग़रीब बना देते हैं। कितने ही विटामिने अधिक आंच देने पर नष्ट हो जाते हैं। अधिक पानी में उबालने पर और पानी फेंक देने पर हम कितनी ही सब्जियों के गुणकारी तत्त्वों से वंचित हो जाते हैं। जहाँ तक हो सके हमें अपने आस-पास में उगने वाली सब्जियों एवं फलों को उनके प्राकृतिक रूप में ही प्रयोग करना चाहिए। इस तरह हम स्वयं को और बच्चों को अंधेपन से बचा सकते हैं।

□

प्रदूषण और भावी सन्तान

बीसवीं शताब्दी समाप्त होने में केवल बारह वर्ष बाक़ी हैं। सन् 2000 के आते-आते संसार में भारी परिवर्तन होने की सम्भावना है। विचारकों का मत है कि आने वाले बीस वर्षों में हमारी यह दुनिया सर्वथा बदल जाएगी। इसमें क्रान्तिकारी परिवर्तन होंगे। इसका रूप ही बदल जाएगा। अनेक नई, जटिल समस्यायें उठ खड़ी होंगी। इन समस्याओं में एक भयंकर समस्या प्रदूषण की है। वायु और जल के प्रदूषण की समस्या इतनी गम्भीर हो जाएगी कि मनुष्य जाति का अस्तित्व ही ख़तरे में पड़ सकता है। खाद्य पदार्थों में मिलावट की बात तो छोड़िए क्योंकि इस समय इस पर विचार करना हमारा अभीष्ट नहीं। यहाँ तो वायु-प्रदूषण एवं जल-प्रदूषण पर विचार ही हमारा मुख्य उद्देश्य है।

आइए, ज़रा देखें कि वायु एवं जल-प्रदूषण की समस्या क्या है और यह क्यों व कैसे उत्पन्न हो रही है। इस समस्या पर यदि क़ाबू नहीं पाया गया तो इसके क्या परिणाम हो सकते हैं। इसमें विद्यार्थी जगत् का क्या कर्त्तव्य है तथा इसे हल करने में विद्यार्थीगण कैसे सहायक हो सकते हैं। आइए, इन सभी बातों पर विचार करें।

प्रकृति हमारी माता है। माता की तरह ही वह हमारा पोषण करती है। परमात्मा ने वातावरण में विभिन्न प्रकार की गैसें पैदा की हैं। उनमें मुख्य आक्सीजन एवं नाइट्रोजन हैं। आक्सीजन और शेष गैसों का सन्तुलन प्रकृति की देन है। आक्सीजन मनुष्य के जीवन का आधार है। आक्सीजन के बिना मनुष्य का जीवन तो क्या किसी भी प्रकार के जीवन की परि-कल्पना करना कठिन है किन्तु आज आक्सीजन और दूसरी गैसों का सन्तुलन बिगड़ने लगा है। वातावरण में ज़हरीली गैसों की मात्रा बढ़ने लगी है और प्रदूषण की वृद्धि हो रही है। इसका मुख्य कारण नगरीकरण है। बड़े-बड़े नगर दिन-प्रतिदिन पृथ्वी पर उभर रहे हैं। उद्योगों की संख्या

बढ़ रही है। उनकी चिमनियों से निकलने वाला ज़हरीला धुआँ वातावरण को निरन्तर दूषित कर रहा है। नगरों के बनने से वृक्ष कटकर, हरियाली समाप्त हो रही है। वृक्षों के काटने का प्रदूषण समस्या से क्या सम्बन्ध है, इसकी चर्चा हम आगे चलकर करेंगे।

जनसंख्या में वृद्धि ने प्रदूषण को और द्रुत कर दिया है। आबादी का घनत्व बढ़ने से आक्सीजन की खपत में वृद्धि हुई है। वाहनों की भीड़ ने शोर की समस्या खड़ी कर दी है। शोर मनुष्य के स्नायु-तन्त्र को बुरी तरह प्रभावित करता है। मनुष्य के शरीर को अस्वस्थ बनाता है। मन की शान्ति को भंग करता है। नींद दूर भगाता है। आराम और गहरी नींद के अभाव से अनेक शारीरिक एवं मानसिक समस्याएँ पैदा होती हैं। इन सबके अतिरिक्त वाहन सड़कों पर जो धुआँ छोड़ते हैं, वह इतना विषैला होता है कि इसके द्वारा सारी वायु दूषित होती है और जहरीले कण हमारे अन्दर प्रवेश कर हमें बीमार करते हैं। मनुष्त अनेक असाध्य रोगों का शिकार बनता है। वृक्षों और मनुष्यों का चोली दामन का साथ है। दिन के प्रकाश में वृक्ष आक्सीजन छोड़ते और कार्बनडायाक्साइड ग्रहण करते हैं। रात के समय यह क्रम उलट जाता है। वे तब आक्सीजन ग्रहण करते और कार्बनडायाक्साइड छोड़ते हैं। पुराने लोग बच्चों को रात के समय वृक्षों के पास जाने की मनाही यह कहकर करते थे कि वहाँ रात को भूत होते हैं। वास्तव में रात के समय वृक्षों का जहरीली गैस छोड़ना ही भूत-तुल्य है।

नगरीकरण से जिस क़दर वृक्ष कट रहे हैं, उसी क़दर हम अपने पाँव पर कुल्हाड़ी मार रहे हैं। वृक्षों का घटना हमारे लिए घातक होगा। वृक्ष हमारे मित्र हैं। उनका विनाश कर हम स्वयं अपना विनाश कर रहे हैं। मल-मूत्र के रूप में हम जो कुछ त्यागते हैं, वे वृक्षों और हरे खेतों की खाद बनता है। हमारे द्वारा विसर्जित गंदगी उनको जीवन देती है। हम साँस द्वारा कार्बनडायाक्साइड निकालते हैं जो दिन के समय वृक्ष चूस लेते हैं और बदले में हमारे जीवन का आधार आक्सीजन हमें प्रदान करते हैं। प्रकृति और वातावरण में आक्सीजन और अन्य गैसों का अनुपात तथा सन्तुलन बनाए रखने के लिए वृक्षों की उपादेयता से कोई इन्कार नहीं

कर सकता। मनुष्यों और वृक्षों का पारस्परिक आदान-प्रदान जीवन का मूल तत्त्व है। यदि जीवन को बनाए रखना हमें प्रिय है, तो वृक्षों का मनुष्यों के अनुपात से ही बढ़ना ज़रूरी है। जहाँ भी वृक्षों का मनुष्यों की संख्या के साथ मेल बिगड़ा, वहीं मनुष्य का अस्तित्व ख़तरे में पड़ जाएगा। नगरीकरण और उद्योगीकरण का परिणाम इस अनुपात को बिगाड़ने में निकला है। यदि हम प्रकृति की गोद से बाहर निकल भागना चाहते हैं और नगरीकरण की धुन हम पर सवार है, तो साथ-साथ हमें वृक्षों की रक्षा भी करनी होगी। उन्हें हमें बच्चों की तरह पालना होगा। तभी वे बड़े होकर बच्चों की तरह ही हमारी रक्षा तथा सहायता कर सकते हैं।

नगरीकरण का दूसरा परिणाम यह हुआ है कि गंदगी बढ़ने से नदी-नालों में जल-प्रदूषण बढ़ रहा है। पानी को पीने योग्य बनाने के लिए क्लोरीन का प्रयोग उत्तरोत्तर बढ़ रहा है। परिणामस्वरूप जल का प्राकृतिक स्वरूप विनष्ट हो गया है। प्रकृति द्वारा प्रदत्त जल में जो खनिज एवं उपयोगी तत्त्व होते हैं उनका क्लोरीन द्वारा साफ किए गए पानी में अभाव होता है। इस तरह पानी प्राकृतिक न रहकर कृत्रिम बन जाता है। सबसे अधिक शुद्ध पानी प्रकृति द्वारा वर्षा का पानी होता है। विज्ञान दोधारी तलवार है, इसने जहाँ मनुष्य जीवन को सुगम, सुखमय बनाया है, वहाँ अनेक कष्ट भी इसके लिए पैदा कर दिए हैं। विषैले युद्धास्त्रों के आविष्कार और परमाणु बमों के विस्फोट एवं प्रयोगों के कारण वातावरण दूषित हुआ है। उपादेय तथा विषैले पदार्थों एवं गैसों का सन्तुलन बिगड़ा है और अभी यह प्रयोग जारी हैं। यदि इसी प्रकार यह सब कुछ होता रहा, तो प्रदूषण की समस्या जटिल से जटिलतर होती जाएगी।

इस समस्या का समाधान जहाँ मनुष्य के प्रकृति की ओर फिर से लौट जाने में है, वहाँ नगरीकरण की गति को धीमा करना तथा परमाणु बमों के विस्फोट एवं प्रयोगों को सर्वथा बन्द करना भी है। ये ऐसी बातें हैं जिन पर सर्वसाधारण का कोई अंकुश नहीं। इन ख़तरों को देखते हुए हमें अपनी शिक्षा प्रणाली में उचित परिवर्तन करने होंगे। स्कूलों और कालेजों में इस प्रकार की शिक्षा देनी होगी जो विद्यार्थियों को प्रदूषण की समस्या का सम्यक् ज्ञान उपलब्ध कराए। मनुष्यों के जीवन-दर्शन में मूल-

भूत परिवर्तन लाये। उनकी मानसिकता को बदल दे। शिक्षा ऐसी हो जो प्रदूषण की समस्या, उसके कारणों एवं समाधानों को उभारे। आज के विद्यार्थी कल के नागरिक हैं। उन्हें आने वाले खतरों से हमें आगाह करना होगा। प्रदूषण समस्या को पाठ्य-क्रम का अंग बनाना होगा। सबसे बढ़-कर हमें वृक्षों की उपादेयता और वृक्ष तथा मनुष्य के सम्बन्ध को उजागर करना है और सर्वसाधारण के मन में इसे बिठाना है। वृक्षों की महत्ता और महत्त्व के प्रति विद्यार्थियों को जागरूक बनाना है! प्रत्येक विद्यार्थी वृक्ष लगाए, उनकी रक्षा करे और यह समझ कर करे कि ऐसा कर वह अपनी, अपने परिवार तथा मनुष्य जाति की रक्षा कर रहा है वृक्षों की रक्षा में मनुष्य की रक्षा निहित है—इस प्रकार का ज्ञान हमें विद्यार्थियों को देना है। उनमें प्रदूषण की गम्भीर समस्या के प्रति जागरूकता उत्पन्न करनी है ताकि वे बचपन से ही वृक्षों के महत्त्व को समझ सकें और अगले बीस वर्षों में आने वाले ख़तरों से परिचित होकर मनुष्य जाति को मिटने से वचा सकें। यदि अब भी हम न चेते तो बहुत देर हो जाएगी। □

परिवार-नियोजन और किसानों का दायित्व

यदि चार रोटियाँ हों और चार ही खाने वाले हों, तो एक-एक रोटी प्रत्येक को मिल जायेगी। रोटियाँ बढ़कर आठ हो जायें, किन्तु साथ ही खाने वालों की संख्या भी बढ़कर सोलह हो जाये, तो हर एक को आधी रोटी ही मिल पायेगी। कुछ ऐसी ही समस्या से आज सारा विश्व ग्रसित है।

भारत एक बड़ा देश है। संसार की समस्त जनसंख्या का 15% यहाँ बसता है किन्तु संसार की सारी भूमि का केवल 2.4% ही यहाँ है। इसमें सन्देह नहीं कि प्राकृतिक साधनों की यहाँ बहुतायत है किन्तु एक पुरानी कहावत है कि खाते-खाते कुएँ भी खाली हो जाते हैं। यदि ये प्राकृतिक साधन इसी प्रकार व्यय होते रहे तो कब तक चलेंगे। हमारी जनसंख्या यदि इसी द्रुत गति से बढ़ती रही तो शीघ्र ही हम अपने भण्डार खाली कर बैठेंगे। यहाँ तक कि साँस लेने के लिए वायु तक का भी अभाव हो जायेगा।

आज स्थिति यह है कि हमारे देश में कोई दो करोड़ लोग बेरोजगार हैं। दस लाख आवासीय मकानों की कमी है। स्कूल जाने की आयु वाले कोई छः करोड़ बच्चे अभी स्कूल नहीं जाते। स्थिति की गम्भीरता का अनुमान इससे ही लगाया जा सकता है कि हमारे यहाँ हर महीने दस लाख यानी लगभग डेढ़ करोड़ व्यक्ति प्रतिवर्ष और बढ़ जाते हैं। यह संख्या आस्ट्रेलिया की जनसंख्या के बराबर है। यों कहिये कि हर वर्ष के अन्त में एक नया आस्ट्रेलिया हमारे देश के साथ जुड़ जाता है। यदि जन्मदर इसी गति से चलती रही, तो इस शताब्दी के अन्त तक अर्थात् सन् 2000 ई० में हमारे देश की आबादी एक अरब तक पहुँच जायेगी जो किसी समय

सारे संसार की जनसंख्या थी।

आज से सैंतालीस वर्ष पूर्व यानी स्वतन्त्रता प्राप्ति से पहले भारत की जनसंख्या 35 करोड़ थी। पहली जनवरी, 1976 को यह 60 करोड़ से भी आगे निकल गई। स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद यह नहीं कि हमारी खेती और औद्योगिक पैदावार में वृद्धि नहीं हुई। हमारी खेती की पैदावार 60% और औद्योगिक उत्पादन 15% बढ़ा है किन्तु इसके साथ ही हमारी जनसंख्या लगभग 100% बढ़ गई है। अब समस्या यह है कि पैदावार तो उतनी तीव्रता से बढ़ नहीं पाती जितनी तेज़ी से जनसंख्या बढ़ रही है फिर प्राकृतिक साधन भी असीम तो हैं नहीं, उनकी भी एक सीमा है। इसी कारण हमारे यहाँ प्रति व्यक्ति खाद्य सामग्री की औसत खपत में वृद्धि नहीं हो पाई। बढ़ती हुई यह जनसंख्या उस छिद्र की भाँति है जो किसी पात्र का सारा जल खाली कर देता है, चाहे ऊपर से और जल भी पात्र में आता रहे। छिद्र बड़ा है, ऊपर से डाला जाने वाला जल कम ! पैदावार बढ़ने की गति कम है, खाने वालों की संख्या में होने वाली वृद्धि भयंकर।

दूसरी ओर हमने जनसंख्या में इस तीव्र वृद्धि को रोकने के लिए कोई उल्लेखनीय प्रगति नहीं की। परिवार नियोजन कार्यक्रम का आरम्भ 1952 में किया गया था। 32 वर्षों की सर तोड़ कोशिश के पश्चात् भी 15 से 45 वर्ष तक की आयु के दस करोड़ 30 लाख विवाहित दम्पत्तियों में से केवल एक करोड़ 75 लाख ने ही इस कार्यक्रम से लाभ उठाया है। 1961 में हमारे यहाँ जन्म दर प्रति हज़ार 42 थी। 1972 में यह कम होकर 37 हो गई और इस समय अनुमानतः 35.5% है। इस प्रकार जनसंख्या में कमी प्रतिवर्ष केवल 8-05 प्रति हज़ार रही।

इन आँकड़ों से स्थिति की गम्भीरता और गहनता का सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है। यह देखकर दिल दहल उठता है। स्पष्ट है कि हम इस प्रकार स्वयं ही विनाश की ओर अग्रसर हैं। भारत प्रधानतः किसानों का देश है। इसके पाँच लाख देहातों में 10 प्रतिशत लोग किसान हैं। समस्त देश की कुल जनसंख्या का 80 प्रतिशत देहातों में निवास करता है। इस प्रकार देश की कुल आबादी का 72 प्रतिशत किसान लोग

हैं। इस तरह एक प्रकार से परिवार नियोजन की समस्या देश के किसानों की समस्या है। दुर्भाग्य यह है कि आबादी का यही भाग इस समस्या के प्रति उतना जागरूक नहीं, जितना उसे होना चाहिए था। उनमें अशिक्षा के कारण धार्मिक अन्धविश्वासों की जकड़बन्दी है। किसान लोग एक भ्रम-जाल में फँसे हैं और अज्ञान से पीड़ित हैं। आज बढ़ती हुई जनसंख्या से देश को वास्तविक ख़तरा है, जिसकी ओर सभी को ध्यान देना है। सच तो यह है कि देश के किसानों ने सदा ही अपनी सूझ-बूझ और बुद्धिमत्ता का परिचय दिया है और आज भी उनसे ऐसी ही आशा की जा सकती है।

नगरों के लोग अधिक पढ़े-लिखे हैं। उन्हें देश की समस्याओं का अधिक ज्ञान है। प्रसन्नता की बात है कि वह परिवार नियोजन के महत्त्व को भी समझ रहे हैं किन्तु किसान वर्ग अभी इसका महत्त्व भली भाँति नहीं समझ पाया। इसका कारण जैसा ऊपर बताया जा चुका है, उनकी अशिक्षा और धार्मिक अन्धविश्वास है हालाँकि इस दिशा में उनका दायित्व किसी अन्य वर्ग से कहीं बढ़कर है। एक अन्ध-विश्वास और भ्रम जो किसानों में विद्यमान है वह यह है कि उनके विचार में उन्हें खेतों में हाथ बँटाने के लिए अधिक लोगों की ज़रूरत है। उनका ख्याल है कि जितने अधिक बच्चे होंगे, उन्हें सहायतार्थ उतने अधिक हाथ मिल जायेंगे किन्तु ऐसा विचार करते हुए वे यह भूल जाते हैं कि बच्चा जन्मते ही तो सहायता के लिए तैयार नहीं हो जाता। पन्द्रह-सोलह वर्ष तक तो उसका लालन-पालन करना पड़ता है। उसे खिलाना पिलाना पड़ता है। तब जाकर वह कहीं इस योग्य हो पाता है कि अपने माता-पिता का खेत के कामों में हाथ बँटा सके। फिर इसे एक दूसरी दृष्टि से देखना चाहिये। काम करने वाले यदि अधिक हों और काम न हो, तो कौन किसकी सहायता करेगा। किसान के पास जितनी भूमि है, जितना काम है, वह तो बढ़ नहीं सकता और काम करने वाले बढ़ते चले जायें तो बेकारी बढ़ने के अतिरिक्त और क्या होगा। इतना ही नहीं इससे एक और हानि यह होगी कि अधिक साझीदारी के कारण भूमि का बँटवारा होता जायेगा। भूमि के छोटे-छोटे टुकड़े हो जायेंगे। परिणामतः विज्ञान के नवीन आविष्कारों से

लाभ उठाना भी सम्भव न रहेगा। विज्ञान ने नये-नये औज़ार एवं मशीनें आविष्कृत कर दी हैं जिनके कारण अब अधिक मानव-शक्ति की ज़रूरत नहीं रही। एक मशीन बीसियों व्यक्तियों का कार्य अकेले कर देती है न केवल द्रुत गति से अपितु सुचारु रूप से भी। इन नवीन आविष्कारों के परिणामस्वरूप अब आदमी पर निर्भरता समाप्त हो गई है। अब हमें काम करने के लिए अधिक हाथों की आवश्यकता नहीं रही। समस्या तो खाने वाले मुखों को कम करने की है। यदि भूमि उतनी रहे और खाने वाले अधिक हो जायें तो उनके लिए अनाज, कपड़ा कहाँ से आयेगा। विज्ञान से लाभ न उठाने का नतीजा यह होगा कि पैदावार में और कमी होगी जबकि हमारा उद्देश्य पैदावार बढ़ाना होना चाहिये।

हमारी समस्या का समाधान घूम-फिरकर वहीं आ टिकता है कि परिवारों का नियोजन हो। इस दिशा में किसानों का योगदान अधिक महत्त्वपूर्ण है। भारत का किसान देश को सदा ही संकट से उबारता आया है! अब भी उसे अपने कर्त्तव्य का पालन करना चाहिये। देश की उन्नति उसकी उन्नति है और उसकी उन्नति देश की उन्नति है। सच तो यह है कि भारत का किसान वर्ग देश से इस प्रकार जुड़ा है कि देश का भाग्य उसका भाग्य है और उसका भाग्य देश का। किसान देश की रीढ़ की हड्डी हैं। उन्हें परिवार नियोजन कार्यक्रम को सफल बनाने में सबसे आगे रहना चाहिये। उनकी देश-भक्ति का प्रभाव परिवार नियोजन की सफलता होगा। यह कार्यक्रम उनका अपना कार्यक्रम है। इसमें पूर्ण सहयोग देकर उन्हें अपनी देशभक्ति का प्रमाण देना चाहिए। अपनी परम्परागत बुद्धिमत्ता और सूझ-बूझ से वे इसे सफल बना सकते हैं। ज़रूरत है केवल विवेक से कार्य करने की और अन्ध-विश्वासों और भ्रमजाल से बाहर निकलने की।

☐

हमारी जंगे आज़ादी

कभी-कभी आज भी उन दिनों की स्मृतियाँ मेरे मन पर उभर आती हैं जब सारा देश स्वतन्त्रता के लिए अंग्रेज़ी साम्राज्य से जूझ रहा था। देश का हर बालक, बूढ़ा, युवक-युवती, बड़ा-छोटा इस बात का दृढ़ संकल्प किये हुए था कि पराधीनता के बन्धन तोड़कर ही दम लेगा और इसके लिए जो भी त्याग करने पड़ें, सहर्ष करेगा। जनसाधारण के हृदय स्वाधीनता तथा उत्सर्ग की भावनाओं से ओत-प्रोत थे। जो कोई भी त्याग करता था तो हँस-हँसकर तथा स्वेच्छा से। युवक फाँसी पर झूले, बूढ़ों ने अपने पुत्र कटवाये, स्त्रियों ने अपने सुहाग खोये, भाइयों के बाज़ू टूटे। स्वतन्त्रता की लड़ाई सबने मिलकर लड़ी और अंग्रेजों को देश से निकाल बाहर किया।

इस संग्राम में केवल बड़े-बड़े शहरों ने ही भाग नहीं लिया अपितु देहातों में भी यह संग्राम लड़ा गया। तुलम्बा पश्चिमी पंजाब के ज़िला मुलतान में एक छोटा-सा क़स्बा है। इसकी जनसंख्या कोई आठ हज़ार के लगभग थी। यह क़स्बा ज़िले भर की राजनैतिक गतिविधियों का केन्द्र था। यहाँ राजनैतिक क्रान्तिकारी शरण लेते थे। यहाँ के लोगों का राजनीति के क्षेत्र में बौद्धिक स्तर इतना ऊँचा था कि देश में चलने वाले प्रत्येक आंदोलन में उन्होंने बढ़-चढ़कर भाग लिया! कई सप्ताहों तक हड़तालें हुईं। किसान आंदोलन चले। सभायें तो हर दूसरे चौथे दिन ही होती रहती थीं। बड़े बड़े नेता यहाँ प्राय: आया-जाया करते थे। यद्यपि यहाँ रेलवे स्टेशन न होने के कारण यातायात में भी असुविधा थी, फिर भी नेता लोग यहाँ आने और लोगों को सम्बोधित करने से नहीं हिचकिचाते थे। कुछ नवयुवक जो कांग्रेस के सक्रिय सदस्य थे, प्राय: राजनैतिक सम्मेलन बुलाया करते थे। इनमें लोगों को देश की राजनीति से अवगत कराया जाता था। इन लोगों में सरदार तेजासिंह और लाला झाँगीराम के नाम

वर्णन करने योग्य हैं। विभाजन के बाद सरदार तेजासिंह सोनीपत में निवास करते रहे और चुपचाप अपना जीवन-यापन करते रहे। कुछ वर्ष हुए वहीं उनका निधन हो गया। लाला झाँगीराम ने वृद्धावस्था में महम ज़िला रोहतक में प्राण त्यागे। उन्हें 'रावी गाँधी' के नाम से पुकारा जाता था। मृत्यु से पूर्व भी उनके मन पर उन जोश-भरे दिनों की याद ताज़ा थी।

उन दिनों की दो घटनाएँ मुझे याद हैं, जिनसे पाठकों का मनोरंजन होगा। इस क़स्बा के बिल्कुल मध्य में एक चौक था जिसे "नेहरू चौक" की संज्ञा दी गई थी। इस चौक में प्राय: राजनैतिक सभायें होती थीं। 26 जनवरी के दिन तो विशेष समारोह होता, जिसमें स्वतन्त्रता प्राप्ति की सौगन्ध ली जाती। एक प्रकार से यह चौक केवल इस प्रकार की सभाओं के लिए निश्चित था। तुलम्बा की नगरपालिका के अंग्रेज़-भक्त सदस्यों को यह चौक एक शूल की तरह खटकता था; उन्होंने यह निर्णय कर दिया कि यहाँ पालिका की ओर से दुकानें बनाई जायें और बीच में खड़े पीपल के वृक्ष को काट दिया जाये। इस प्रकार एक ओर तो पालिका की आय में वृद्धि होगी तो दूसरी ओर यहाँ दिन-प्रतिदिन होने वाली सभाभों से भी मुक्ति मिलेगी। यहाँ के देशभक्त युवक भला इसको कब मानने वाले थे। उन्होंने इसका विरोध किया और पीपल के वृक्ष के ऊपर एक ऊँचे बाँस के साथ तिरंगा लहरा दिया। यह तिरंगा शहर के बाहर दूर-दूर से दिखाई देता था। इससे नगरपालिका और भी चिढ़ी! इसने निर्णय किया कि झण्डा रात के अंधेरे में पीपल से उतार दिया जाये। पुलिस कप्तान एक खाती को लेकर लाठियों और बन्दूकों की छाया में आ उपस्थित हुआ। रात के अंधेरे में तिरंगे के बाँस को कटवा दिया गया। उस कटे हुए बाँस की निशानी 15 अगस्त, 1947 को उसी वृक्ष पर खड़ी थी।

दूसरे दिन जब लोगों को तिरंगे का बाँस कट जाने का समाचार मिला तो वे समूहों में वहाँ इकट्ठे होने लगे। वे तिरंगे को फिर वहीं लहराने का संकल्प कर चुके थे। मुझे याद है कि पुलिस के सिपाही सारी रात पीपल के वृक्ष के चारों ओर बाँहें डालकर पड़े रहते थे ताकि कहीं

लोग वृक्ष पर झण्डा फिर न लहरा दें। लोगों की भीड़ बढ़ती गई। हम उन दिनों छोटे-छोटे बच्चे थे और स्कूल से भागकर तमाशा देखने वहाँ पहुँचे थे। पुलिस ने निर्दयता से लाठी प्रहार आरम्भ कर दिया। जब पुलिस लाठी प्रहार कर रही थी, तो मेरे एक 69 वर्षीय बुजुर्ग ने अपने सर से पगड़ी उतारी और यह कहते हुए अपनी गंजी खोपड़ी लाठियों के आगे कर दी कि…"इन बच्चों को क्यों पीटते हो, लो मुझे मारो।" क्या बताएँ, बस जोश का एक सागर उमड़ रहा था। कांग्रेस के नेता तथा कार्यकर्त्ता गिरफ्तार कर लिये गये। यह झण्डा आंदोलन निरन्तर कई दिन चला। अन्ततः सरकार और कांग्रेस के बीच समझौता हुआ। सरकार ने यह स्वीकार कर लिया कि "नेहरू चौक" सभाओं आदि के लिये पूर्ववत् खुला रहेगा। नगरपालिका यहाँ दुकानें नहीं बनाएगी। उन दिनों के नारे आज भी मेरे कानों में गूँजते हैं। 'तुलम्बा कमेटी हाय-हाय' 'खराँ रुपया चाँदी का, राज महात्मा गाँधी का', 'इन्क़िलाब ज़िन्दाबाद'। पाकिस्तान बनने पर उसी नेहरू चौक का नाम बदल कर 'जिन्ना चौक' रख दिया गया और 15 अगस्त, 1947 के दिन वहीं पाकिस्तानी झण्डे की सलामी हुई।

दूसरी घटना भी एक मनोरंजक घटना है। दूसरा महायुद्ध चल रहा था। 1941 का वर्ष था। गाँधी जी के आदेशानुसार व्यक्तिगत सत्याग्रह आंदोलन पूरे जोबन पर था। सत्याग्रह करने से पूर्व प्रत्येक इच्छुक सत्याग्राही को गाँधी जी से स्वीकृति लेनी पड़ती थी और इसके पश्चात् सरकार को अपने निर्णय की अग्रिम सूचना देनी पड़ती थी कि वह अमुक दिन, अमुक स्थान तथा समय पर युद्ध के विरोध में नारे लगायेगा। पुलिस को सरकार की ओर से यह आदेश था कि प्रत्याशी सत्याग्रही को पहले ही पकड़ लिया जाये और सरकार तथा युद्ध के विरोध में नारे न लगाने दिये जायें। स्थानीय कांग्रेस के एक मुसलमान कार्यकर्ता श्री जमालदीन ने सत्याग्रह करना था। उन्होंने ज़िलाधीश को अपने संकल्प से पहले ही सूचित कर दिया था। पुलिस चाहती थी कि जमालदीन को सत्याग्रह करने से पूर्व ही पकड़ ले, किन्तु काँग्रेस वाले चाहते थे कि वह सत्याग्रह करने के बाद ही गिरफ्तार हो। दोनों में ज़िद हो गई और दोनों के लिए सम्मान का

प्रश्न उपस्थित हो गया। पुलिस ने जमालदीन को पकड़ने की सिरतोड़ कोशिश की, किन्तु सफल न हो सकी। आखिर सत्याग्रह का पावन दिवस आ पहुँचा। नेहरू चौक में एक बड़ी सभा का आयोजन किया गया। रात के 9 बजे जमालदीन ने युद्ध के विरोध में नारे लगाने थे। पुलिस ने चौक को जाने वाले सभी मार्गों की नाकाबन्दी कर ली और शाम होते ही चौक की ओर जाने वाले प्रत्येक व्यक्ति पर दृष्टि रखी जाने लगी। सभा में लोगों की भीड़ बढ़ती गई। मैं स्टेज के बिल्कुल पास बैठा था। लोग जमालदीन की बड़ी उत्सुकता के साथ मंच पर आने की प्रतीक्षा कर रहे थे। वे यह जानना चाहते थे कि जीत पुलिस की होती है या कांग्रेस कमेटी की। पुलिस का प्रबन्ध देखकर तो कुछ लोगों को निराशा होती थी कि कहीं ऐसा न हो कि जमालदीन मंच पर पहुँच ही न पाये।

रात्रि के ठीक 9 बजे एक धमाका-सा हुआ और सबने जमालदीन को मंच पर खड़े पाया। वह चिल्ला-चिल्लाकर नारे लगा रहा था— "इन्क़िलाब ज़िन्दाबाद"। "कांग्रेस ज़िन्दाबाद" "चन्दा बंदा मत दो।" लोग तो आश्चर्यचकित रह ही गये थे, पर पुलिस के तो पसीने छूट गये। सारा वायुमण्डल "जमालदीन ज़िन्दाबाद" के नारों से गूँज उठा। पुलिस ने लपककर जमालदीन के हाथों में हथकड़ी पहना दी। वही जमालदीन पाकिस्तान बनने पर लोगों की अदलबदल के समय स्टेशन पर बैठा रो रहा था और अपने साथियों को विदाई दे रहा था। जमालदीन मंच पर कैसे पहुँचा। उसके घर में स्त्रियाँ बुर्क़ा पहनती थीं ! वह उनके साथ बुर्क़ा पहनकर स्त्रियों में आ बैठा था। मंच से संकेत पाकर बुर्क़ा उतारकर मंच पर आ चढ़ा। काँग्रेस की इस सफलता पर प्रसन्नता की लहर दौड़ गई।

मुझे अब भी जब यह घटना याद आती है, तो सारा वातावरण आँखों के सामने घूम जाता है और हृदय प्रसन्नता तथा जोश से भर जाता है। ऐसे थे हमारी जंगे आज़ादी के वे दिन।

□□